गुलों का बाज़ार

प्रभात उप्रेती

गुलों का बाज़ार

लेखकः प्रभात उप्रेती

निःशुल्क वितरण हेतु ई-पुस्तकः 2019

आवरण चित्रः एटेलियर मिरू (यूके) इंटरनेट से साभार

लेखक

प्रभात उप्रेती

सेवानिवृत्त प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र), लेखक, कवि और सामाजिक कार्यकर्ता.

प्रकाशित पुस्तकेंः एक आदमक़द इन्सान, संघर्षरत उत्तराखण्ड, हिमालय की पदयात्रा, पर्वत में नशा, पर्वत में पर्यावरण की कहानी, ज़िन्दगी में कविता, उत्तराखण्ड की लोक एवं पर्यावरण गाथाएं, फागूदास की डायरी (संपादन).

अख़बारों व पत्रिकाओं में नियमित लेख प्रकाशित.

वर्तमान पताः विवेक विहार, गैस गोदाम रोड, कुसुमखेड़ा, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड

गुलों का बाज़ार

गुलों में रंग भरे बाद-ए-नौ बहार चले
चले भी आओ गुलशन का कारोबार चले

फूलों का बाजार तो अब मुनाफे का विकसित हुआ है पर गुल यानी फूलों का यह कारोबार, मार्निंग वॉक के बूढ़ों-बूढ़ियों से लेकर, धर्म, नेता, उत्सव वाले, मरने वाले, प्रेमियों और राजनेता और कवियों का सदियों से चला आ रहा है। सब पीछे पड़े हैं। बिचारे बुरांश के फूल पर भी जिसके लिए लोकगीत था-

पारा भीड़ा बुरांशि फूली रै छ
मैं जो कूं च्छूं मेरो हीरू ऐ रै छ...

वह फूल आज शिकारियों के हाथ पड़ गया है न जाने किसने इसे दिल के लिए मुफ़ीद घोषित कर दिया कि अब उसको निचोड़-निचोड़कर पिलाया जा रहा है। क्या बेवफाई है! लोकेश डसीला की इस अत्याचार पर बुरांश पर बेहतरीन कविता का अवलोकन करें।

क्या गुलों का खबूसूरत रौशन होना,
कांटों में भी खिलना,
खुशबू बिखेरना गुनाह है!

ये क्या बात हुई कि गोष्ठियों में किसी महान मरे के लिए घोषित हो कि अब फलां-फलां की मूर्ति या चित्र पर पुष्पांजली दी जाय! प्लास्टिक में सजाकर फूलों का बुके दिया जाय। कांटों में भी खिलकर जो इतनी रंगत लाते हैं उसे नेताओं, मरों पर सूई से छेद-छेद कर माला बना कर मुर्दों या नेताओं को पहनाना क्या इंसाफ है! नेताओं को तो कांटों की माला पहनानी चाहिए। उन्हें आभास दिलाना चाहिए कि तुम कांटों का ताज पहन रहे हो। आशिक अपनी महबूबा को घुटने टेककर गुलाब दे कर अपने प्रेम का इजहार पता नहीं क्यों करते हैं। उन्हें शायद अपनी गुलाब प्रेमिका के कांटों का आभास नहीं होता।

एक पंडितजी ने एक बार कथा कहते समय लोगों को भगवान को फूल समर्पित करने वालों को जो कहा वह मुझे अच्छा लगा। उन्होंने कहा, ''सुमन का

मतलब होता है अच्छे मन से खुद को भगवान के सम्मुख समर्पित करना...।''
सस्ते में न निपटाओ, करना है तो अपने को समर्पित करो तब तो बात है।

फिल्म के एक गीत ने फूलों की किस्मत का सही बयान किया है–

खिलते है गुल यहां
मिल के बिछुड़ने को...

सामने कद्दू के फूल खूब खिले हैं। मुझे लगता है उसने अपनी बेल खूब फैला कर अपने को बचा लिया है। कहते हैं न कि मैं कद्दू की बेल की तरह नहीं बढ़ रहा। बदनाम होने का भी अपना मजा है। बच जाते हैं महानता की तोहमत से...।

हे! माखनलाल जी दिमाग से पैदल लोगों लोगों को क्यों उकसा रहे हैं-

मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ पर देना तुम फेंक
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक...

अरे कुर्बान होने वाले बहादुर शहीद क्यों आरजू कर रहा है- गुल बन के खिल जावां, यही है मेरी आरजू...। कब तक इन अस्थाई देशभक्तों, भक्तों के बहकाने पे आयेगा!

इस देश में गुलों का बाज़ार सजता है।

ढोंग दिवस

एक शेर को थोड़ा बदल के लिख रहा हूं-

किया था अहद फेसबुक में न मिलने का, बार-बार लिखते रहे,
यह बेचैन आत्मा, खाली दिमाग का अल्मियां है।

बाजार का नियम है लत लगाओ मुनाफा पाओ। हमें भी लत लग गयी सो कमबख़्त दिमाग में कुछ अटका तो लिख दिये यह जानते हुए भी कि- फेसबुक यार किसके, लाइक दागकर खिसके।

इस बार दिमाग 'हिमालय बचाओ' की वार्षिक कयावद होते देख रह न पाया। विश्व प्रसिद्ध पर्यावरणविद सुंदरलाल बहुगुणा जी के इस अभियान का कब कैसे अपहरण कर लिया या इसे पेटेंट कर लिया, इसका तो पता नहीं पर जिस प्रदेश में फोर लेन के नाम पर हजारों पेड़ कट गये, फिर पेड़ लगाने के लिए करोड़ों केन्द्र से पा गये। जंगल काटू जन 5 जून को पर्यावरण दिवस मना गये। जहां की सरकार किसी इस प्रदेश की ज़मीन खुले आम बिकने से रोकने के लिए कानून न बना पायी, उस प्रदेश को यह दिवस मनाने का नैतिक अधिकार है?

किसी ने जय श्रीराम का उद्घोषकर ताना सा मारते पूछा- पंडित जी आजकल आप दिखाई नहीं दे रहे! अब तो पॉलीथिन पर मोदी जी ने रोक लगा दी है, अब तो आप फुर्सत में होंगे! हिमालय बचाओ दिवस के आयोजन में आपको भी बुलाया होगा। वैसे बुरा न मानें (होली न होने पर भी) एक दिन तो हम सबने 'ढोंग दिवस भी मनाना चाहिए'।

मैंने तंग आ कर ताने का जबाब तंज से देते हुए कहा- हुजूरे आला! इस देवभूमि में एक दिन ढोंग दिवस, राक्षस दिवस मनाने की क्या जरूरत है! यह तो रोज मनाया जाता है। टेहरी, पंचेश्वर जैसे बांध बना कर सारे प्रदेश को डुबाकर, पहाड़ दिवस मनाना...। शराब का धंधाकर शराब विरोधी आंदोलन करना...। एक हमारे ठेठ पहाड़ी मित्र डायलॉग मारते हुए कहते हैं- वह पहाड़ी पहाड़ी क्या जो रोज नहाये, वह पहाड़ी पहाड़ी क्या जो भात न खाये, पैग न लगाये...। वो सरकार सरकार क्या जो भ्रष्टाचार पर रोक लगाऐ...। जब हर चीज में एब्सर्डिटी है तो यह

भी सही। आज लाफिंग क्लब ने निरोगी काया के लिए इसमें जै श्रीराम का उदघोष करना भी जोड़ दिया है...। हम तो विश्वगुरु हैं, मुंह से जो निकल जाय वह आप्त वचन है। सारे मर्ज की दवा है हमारा प्राचीन गौरव...! तो बंधू! कुछ भी कहो बस खुश रहो। हजरत गंज रहो या अमीनाबाद या देहरादून रहो। गैरसेंण को गैर रहने दो हम तो तुम्हारे ताबेदार हइए हैं...।

वह मेरे एब्सर्ड कथन से रूबरू न हो पाये और फिर उन्होंने मनोहर श्याम जोशी की 'कुरू करू स्वाहा' या 'कसप' न पढ़ी थी तो उनके लिए यह सारे कथन 'क्याप्प' हो गए ठैरे। बस वह यही समझ गये बूढ़ा गुरू, हो गया शुरू। सटक गया। सेहत के लिए अच्छा है सरक लें... और वह सरक लिये...।
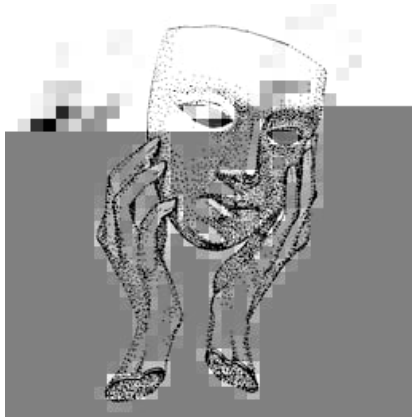
फ़िक्रमंदों की किस्में

जब से बीमार हुए तब से हम देखने लायक हो गये। चलो बीमारी ने ये रुतबा तो दिया जो ज़िदगी ने कभी न दिया पर ये बात तब जरा खटक गयी जब एक ज़ालिम मित्र ने आगाह किया- बिवेयर! लोग ज़ू देखने भी जाते हैं।

ये देखने, हालचाल पूछने वाले लोग पांच वर्गों में बांटे जा सकते हैं। एक- जो वाकई फ़िक्रमंद होते हैं। इन फ़िक्रमंदों में जिनसे उधार लिया है, वे भी होते हैं। दूसरे- रस्मी होते हैं। तीसरे- जिन्हें हम ने भी मरीज होते देखा और उनके हालचाल पूछा था। चौथे- जो पास से गुजर रहे होते हैं या किसी काम से आये होते हैं। तो लगे हाथ यह काम भी निपटा लें, वाले अंदाज़ में पहुंच जाते हैं। यह 'लगे हाथ' बहुत मुफ़ीद मुहावरा है- यानी 'एक पंथ दो काज'। पांचवें, फेसबुकिया नये इजाद हुए हैं और 'गेटवेल सून' कहकर सस्ते में निपट जाते हैं।

हालचाल पूछने वालों का वर्गीकरण कुछ और अंदाज़ से भी किया जा सकता है। यथा- खाली हाथ आने वाले, सस्ते माल पर खूब जगह घेरने वाले यथा केले, और मंहगे पथ्य सा माल लाने वाले। जब से हमने मिठाई लाने की शर्त दी थी तो आवत–जावत कम हो गयी। कुछ हालचाली आते तो खाली हाथ पर आते ही अपनी पैथी बताने लगते हैं। अब तो कुछ गिलोय, पपीते आदि तरह-तरह के पत्ते भी लाने लगे हैं। और कुछ प्रेमी तो आपकी बिमार होने के एडवांटेज को चेलेंज देते कहते हैं- वाह आप तो खिल रहे हैं! ठीक हो गये हैं आप...। विल पावर बनाये रक्खो...। यह तो ग़म–ए–रोजग़ार पर लात मारना हुआ, यानी-

उनके देखे से जो आ जाती है मुंह पर रौनक
वो समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है!

मरीज़ भी कई क़िस्म के होते हैं। एक होते हैं शहीदाना तबियत के मरीज़। वे हाल पूछने पर कहते है- अरे क्या दर्द ही तो है अपना यार। इट्स ए पार्ट ऑफ लाइफ़। इससे हाल चाल पूछने वाली की तबियत हरी हो जाती है कि चलो देख लेने की छुट्टी हुई।

मैं तो बिसूरने वाला मरीज़ हूं। बैक ग्राउंड में नौराट-खौराट के संगीत के साथ दर्द को और गाढ़ा बनाकर मरी आवाज में कहता हूं- बहुत दर्द है..., आह! इस डर से कि कहीं सहानुभूति का स्कोप खत्म न हो जाय। हम तो उस कैटेगरी के इंसान हैं जो मरने पर भी चाहने वाले को अपनी तरफ आते देखें तो कह दें-

ए मेरे ख़ुदा! थोड़ी सी ज़िंदगी दे दे
उदास मेरे जनाज़े से जा रहा है कोई।

मरीज़, मौत और तीमारदारों पर लेजेंड शायर ग़ालिब ने मेरे ख़याल में सबसे ज्यादा लिखा है। भले ही वह मरीज़–ए–इश्क़ हों या फिर दुनियावी रस्म से परेशान मरीज़...

रहिए अब ऐसी जगह चल कर जहां कोई न हो
हम-सुख़न कोई न हो और हम-ज़बाँ कोई न हो
पड़िए गर बीमार तो न हो तीमारदार
और अगर मर जाइये तो नौहाख़्वां* कोई न हो।

कभी अंदर की दीवानगी, सब छोड़छाड़ के सफ़र करते जंगल के एकांत में किसी घने पेड़ की मेहमानवाजी का लुत्फ़ उठाने का मन करता है। पर सफ़र का क्या मज़ा जब कमबख़्तों ने सड़क के दोनों ओर के पेड़ ही काट डाले हों और जंगलों को फूंक, एकांत जला बाजार बना डाला हो...। जंगल भी तो दर्दमंद हैं। बकौल ग़ालिब-

हर इक मकान को है मकीं से शरफ़ 'असद'
मजनूं जो मर गया है तो जंगल उदास है।

----

* रोने वाला

कवि का अंहकार

एम्स में अपनी कीमो लेने का इंतज़ार एक कुर्सी में बैठकर कर रहा था। आने जाने वाले चेहरों पर लिखी इबारत की किताब पर पढ़ने का प्रयास करते हुए डायरी में एक कविता उभर रही थी-

हम असली पक्के पाठक हैं
लोगों के चेहरे की इबारत पढ़
उनकी किताब पढ़ते हैं
उनके दुःख दर्द संबंध, हादसों के किस्से कहानियों को
उनकी चेहरों की जुबानी पढ़ते हैं
वह लिखा, पढ़ के समझ में आये न आये
पर उनकी कहानी किस्से उनकी आंख की रौशनी में बांच लेते हैं
बाकी किस जानकार ने जिंदगी को समझा कि जो हम समझ जाते!
पर दो चार महोब्बत की बातें, एक पल का सुकून भरा साथ
इतना ही क्या काफ़ी नहीं हमसफ़र होने के लिए!

तभी एक मुस्कुराता युवा आया। उसने मुझसे पूछा- अंकल! आप क्या कविता लिख रहे हैं! आश्चर्य से मैंने कहा- हाँ और मुझे हुआ कि आज कविता सुनने की भुखमरी में कोई धनवान कद्रदान भी है। मेरी कविता सुनने को तैयार है। मैं इतरा गया। उसने कहा- अंकलजी अभी आता हूं और आपकी कविता सुनता हूं। वह आया और उसने मेरी कविता सुनी पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। तब कविता को कमज़ोर समझ खीज मिटाने के लिए मैंने कहा- अभी कच्ची है धूप में तप के पक्की बनेगी...। उसने फिर उन कवियों के नाम पूछे जिन्हें पढ़ा जाना चाहिए। मैंने बताए और फिर उसने अपनी कहानी बतलायी कि वह डीयू मे पढ़ता है, रणजी भी खेल चुका है। पर क्या करें इस ज़िंदगी में न चाहते भी बहुत कुछ छोड़ना पड़ता है। देख रहे हैं ये लोगों का हुजूम! सारा हिंदुस्तान बीमार है। एम्स अकेला मरीजों की भीड़ से जूझता है। हर ओर अभाव और दुर्दिन जीती यह भीड़! चीन ने नियंत्रण किया पर हमारी सरकारें इंदिरा गाँधी के बाद इस पर वोट बेंक के डर से सोचती ही नहीं हैं...। मैं सुबह आठ बजे से रात दस बजे तक

दवाई बेचता हूं। उसके बाद फिर नींद के सिवा रह क्या जाता है...! मैं न रहूं तो मेरे बदले हजार और खड़े हो जायेंगे। कितना कम्पटीशन है! हर जगह 'तू नहीं सही तो और सही' है...।

एक अफ़सोस अपने चेहरे पर लटकाकर वह चला गया। मैं पांच घंटे बाद अपना कीमो लेके वापस आ गया तो मैंने अपने परिवार को यह घटना बड़े गर्व से बताई और कहा, ''पता नहीं मेरे साथ कुछ ऐसा क्यों होता है! कुछ न कुछ ख़ास घटता रहता है। क़ायनात मुझसे कुछ कराना चाहती है क्या? बेटे ने कहा- ''पापा! ये सब के साथ होता है। आप उन घटनाओं को पकड़कर लिख भर लेते हो।'' तभी बेटी बोली, ''अरे अभी दो युवा राग–रागनी का विभिन्न बिमारियों पर क्या असर होता है, इस पर गुनगुनाते हुए चर्चा कर रहे थे। कह रहे थे घराना क्या है, सुर लगने चाहिए तो यही युवक उनसे कह रहा था, ''मुझे भी सिखा दीजिए ये गाना!''

मैं अपने कवि होने के फर्जी अहं से नीचे उतर गया।

मैं समझ नहीं पाया कि युवक को सब कुछ सीख कर जी लेने की साध के साथ ज़िंदगी जी लेने की इच्छा थी या फिर ग्राहक को खुश करने के तौर-तरीकों की पेशेवर मांग थी।

लोकतंत्र की होली

दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र उर्फ भोगतंत्र, दलतंत्र या दलबदल तंत्र यानी भारत के चुनाव में एक पक्ष इसके परिणाम भोगता है, दूसरा पक्ष उसे भुगतता है। मैं जमीन में बिखरे चेहरे उठाता हूं, उसमें जनता को पाता हूं।

उत्तराखंड से लेकर सारे देश में दलीय उम्मीदवार वही पेशेवर हैं जो सामाजिक घाव के रिसावों को हथियार बनाकर जाति, भ्रष्टाचार, धर्म, नशा, कृत्रिम बुद्धि और राजनैतिक गणित से चुनाव जीतते हैं। इस तकनीक पर जिसने कब्जा किया होली का रंग उसके नाम इशू हो गया। इनमें से कई दबंग हैं तो कोई बागी कोई दागी। नैतिकता की हद देखें कि कांग्रेस के प्रबल विरोधी केजरीवाल कांग्रेस से हाथ मिलाने को बिलबिला रहे हैं।

यह वह चेहरे हैं जिन्होंने न कभी जनता से मतलब न रखा और न जनता को इनसे आशा रही फिर भी वह उन्हें नवाजती रही। जनता इतने सालों के चुनावी सफ़र के बावजूद बेचारी की बेचारी ही रही और हारती रही, दल जीतते रहे!

कारण यह भी है कि हम अपनी बीमार समाजिकता के चलते सामंतवादी प्रवृत्ति वाले लोग हैं। लोकतंत्र, राजनीति से ज्यादा एक स्वस्थ्य मानसिकता, बौद्धिक सहिष्णुता की मांग करता है। हमारे अपने ही घर में लोकतंत्र नहीं है। बीमार मानसिकता वाला हमारा सामंती-जातिवादी समाज, जिसका आजादी के बाद राजनैतीकरण हुआ फिर अपराधीकरण, नकली सोडावाटरीय जोश वाली देशभक्ति और धार्मिक मुद्दों के दामन मेंफंसता रहा है।

इस बार रेलवे स्टेशन में मैंने ऐसिड अटैक पीड़ित अच्छी खासी लड़कियों को मुंह ढके जाते हुए देखा। सचमुच मन में बड़ी कलकली लगी। इस सेक्स फ्रस्ट्रेटेड समाज की विद्रूपता तब दिखती है जब आप या मैं लोगों के बीच अपनी बहनों, बेटियों के साथ गुजरते हैं। घूरती हुई मैली आंखें साफ नज़र आती हैं। इस देवभूमि में आए दिन सामूहिक बलात्कारों की खबरें तड़फ पैदा कर देती हैं। काहे के हम विश्वगुरु! लोकतंत्र जिस जिम्मेवारी की डिमांड करता है वह यहां कहां है!

एक बार रेल में खाना परसा गया तो एक विदेशी मुझसे बोला- इतना सारा पौलीथिन हर रोज! कहां का लोकतंत्रीय सोच है! जहां पालीथिन की जरूरत नहीं वहां भी पानी की बोतल और सब्जी में वह है। हर पैकेज में थर्मोकोल है, टैटा पैक है। हमारी फूड चेन में प्लास्टिक बुरी तरह भर गया है। मैं तो भारत में इतनी भीड़ देखकर कांप जाता हूं। फैमली प्लानिंग की एवेयरनैस भी नहीं ...।

दुनिया में सबसे ज्यादा प्लास्टिक भारत इस्तेमाल करता है। इतना प्लास्टिक दुनिया में है कि उससे धरती को पांच बार लपेटकर उसका दम घोंट लो। हर शादी में 200 बोतलें पानी की लगती हैं। पर्यावरण, परिवार नियोजन किसी के भी घोषणा पत्र में नहीं। क्योंकि पर्यावरण नाश व खनन से जुड़े स्वार्थ दलों को चुनाव खर्च मुहैया कराते हैं। हरिद्वार में खनन को लेकर कितने ही पर्यावरणवादी शहीद हुए। हमने कितनी बार अभियान चलाया पर कहीं जूं भी न रेंगी।

लोकतंत्र पर स्वस्थ्य बहस यहां नहीं होती मगर हर घर में मोदी छाए रहते हैं। मुलायम, मोदी, ममता, मायावती जैसे चुनावी योद्धा किस अर्थ में सत्ता भोग रहे हैं, इसका कारण नहीं खोजा जाता। सारे विश्व में आर्थिक संकट व दक्षिणपंथी उभार से लोकतंत्र संकट में है पर युवाओं को इससे कुछ लेना देना नहीं। उनकी दुनिया मोबाइल लैपटॉप तक है। कोई नृप हो हमें हानी ही हानी है का भाव है।

लोकतंत्र का आलम यह है कि समर्पित उम्मीदवार की हमेशा जमानत जब्त होती है। उत्तराखंड में बौद्धिक रूप से सक्रिय इंद्रेश मैखुरी जैसे अनेक समर्पित युवा चुनाव हारते रहे। यह लोकतंत्र एक तो समर्पित नेता को जिता पाता!

उत्तराखंड के हर इलाके में चुनाव के दौरान टंकी भर दारू पीने को मिलती है। रात-दिन दावत के लिए रसोइया तैनात रहता है। छोटे से इलाके में प्रति दिन अचार की खपत दस किलो रहती है और हर चुनाव में दारू के कैरेट का टेंडर खुलता है। ओक से पियो। अपराधी उम्मीदवार पर रोक कहां है!

कांग्रेस ने देश को कई समस्याऐं दीं। उनके अध्यक्ष को अपना कद बढ़ाने के लिए आज प्रियंका की जरूरत है तो भाजापा ने देशभक्ति, गाय, गोकशी, झंडा, बंदेमातरम जैसे मुद्दों से धार्मिक खेल खेले हैं। स्वास्थ्य, पुलिस, अदालत जनता की नजर में दुहने और बर्बाद करने वाले संगठन हैं। हाल ही में ही सर्वोच्च न्यायालय ने फटकार लगायी कि विगत पांच साल से एम्स में डॉक्टरों की भर्ती क्यों नहीं हुई! प्रशासन ठेके में चल रहा है। कुछ दिनों के लिए मीडिया की किच-

किच, झिक-झिक आपको झिक-झिकाएगी। यही शेर जुबां पर आता है-

दोस्तो बज्म सजाओ कि बहार आयी है
खिल गये जख्म कोई फूल खिले न खिले।

और होली-

घुसी आयो शहर में ब्योपारी
इस ब्योपारी को भूख लगी हैं
वोट दिला दे मतवाली
बाकी मोदी राहुल खेले होली
जनता से करें बरजोरी

आप कहेंगे कि आपने सब जिम्मेवारी बहुत होशियारी से जनता पर च्याप दी है पर लोकतंत्र की स्वस्थ्य मस्तिष्क पर जिम्मेवारी तो है। होली के बाद लोग कहेंगे-चलो होली भी निपट ली। चुनावी शोर में सारे रंग जब सूख जायेंगे तो चुनाव भी जनता को निपटा देंगे। इस निपटा-निपटी में हमेशा की तरह सवाल रह जायेंगे कि लोकतंत्र के लिए चुनाव या चुनाव के लिए लोकतंत्र!

हारे हुए चेहरों की उदासी
जीत के दर्प से चहचाहते विजेताओं की सरकार
फिर पांच साल बाद ही होगा इन सबका दीदार
नोट सोट रंगीन जलवों का खुमार
कहां है जनता जनता और जनता की सरकार
इसलिए बने रहें आपसी सौहार्द में जीवन श्रृंगार
हंसी बोल वक्त कट जाये– रसिया
जैसे मुसाफिर टिकट सराय में
भोर भई चली जाये रसिया

चुनाव तो लोगों के दिमाग से डिलिट हो जायेगा। पर प्यार का रंग डिलिट न हो। इन बिगड़े चुनावी होलियारों के लिए दिमाग खराब न हो। प्रेम स्नेह बनाये रखियेगा।

न टूटे ये प्रीति की डोरी गीत चला चले।
इस पोस्ट के लिए बुरा मानें तो मानें मेरी बला से- चुनाव है...!

देशभक्ति की गंगा

आज देशभक्ति की गंगा हरहरा रही है। मोदी जी की कुशल कूटनीति और राजनीति से देशभक्ति स्थापित हो गयी है तो मोदी जी भी पुर्नस्थापित हो गये हैं। अगला चुनाव एपीसोड कहलाया जायेगा जो देशभक्ति को पेटेंट कर लड़ा जायेगा। मुझे चाहे पतनशील या प्रगतिशील कहा जाय पर अपना तो कहना है कि प्रेम कोई भी हो उसकी इंतहा अपने काम के प्रति सम्पूर्ण समर्पण पर ही होती है। प्रेम की ताकत मानवतावादी होती है। पूरी शिद्दत से अपने को हासिल काम को करने में ही सभी भक्ति समा जाती है।

इस हरहराकर बहती गंगा में मैंने भी चाहा कि नहा लिया जाय, हाथ धो लिये जायें। कुछ अपने पेंडिंग काम उसी तरह करा लिये जायें जैसे इंदिरा गांधी के इमरजेंसी काल में प्रशासनिक काम मैंने कराये। उस समय ऐसे प्राध्यापक जो कभी नकल करते दादाओं को देखते ही छत की ओर निहारने हुम दार्शनिक बन जाना श्रेयस्कर समझते थे, वे भी दिन-भर में तीन-चार दादाओं को बुक कर लेते थे।

मैकियावली की इस बात से मैं सहमत हूं कि राजनीति या आदमी दो भावों 'भय'और 'प्रेम' से चलता है। इसमें भी आदमी डर प्रमुख है। इसलिए उन दिनों प्रशासनिक काम, मुस्तैदी से बिला नागा समय पर तत्काल प्रभाव से होता था। चुनाव के समय भी होता है। यह भयजनित प्रशासनिक मुस्तैदी दिखाती है कि अगर लगन हो, भय हो तो प्रशासन चुटकी में जन समस्याओं का समाधान कर सकता है।

सो मैंने सोचा क्या पता 'देशभक्ति के भाव से कर्मचारी भी लबाबल हों, इसलिए अपने जान-पहचान के एक कर्मचारी से अपने मित्र का पेंडिंग सही मैडीकल क्लेम को पास करावा लूं। वह भी तात्कालिक देशभक्त था। भारत माता का जयकारा पूरे जोश से लगाता था। बोध कथाओं से प्रभावित होकर मुझे महाभारत की एक कथा याद आ गई। युधिष्टर के राजसूय महायज्ञ में एक सुनहरी गिलहरी आयी और धूल में लोटपोट होने लगी। कृष्ण ने पूछा- यह क्या कर रही हो? गिलहरी ने जवाब दिया, ''एक ब्राहमण ने अकाल में अपना बचा सत्तू एक

भूखे को दिया। मैं वहीं थी और मैंने वहां की धूल में लोट लगायी तो शरीर सोने का हो गया। बस यह देख रही थी कि तुम्हारे महान यज्ञ से मेरी पूंछ सोने होती है कि नहीं...।''

सो गिलहरी के अंदाज में मैंने आज के इस महायज्ञ के समारोह लोट लगाने की सोची। अपने पहचान के कर्मचारी से कहा- ''भई सालों से यह बिल पेंडिग पड़ा है। वह मरण झेल रहा है। इसे पास करा दो यही असल देशभक्ति है।'' वह बोला- ''मुझे ज्ञान मत दो हर काम मेरा सही समय आने पर होता है।'' मैंने कहा- ''कोई सच्चा देशभक्त बना होगा इस प्रोसेस में, उससे करा लूंगा।'' वह बोला- ''काम हो जायेगा तो बता देना! तुम्हारा अभिनन्दन करा दूंगा डियर! अब भी सुधर जाओ...।'' पता नहीं मैं कब बिगड़ा था! वह फिर भारतमाता की जय करते हुए कैंटीन में टमाटर की चटनी से बंद मक्खन खाने चला गया।

वह काम आज तक पेंडिंग है। चैनल युद्ध के उन्माद में मेरी अपील खारिज है। चैनल का एक सिपाही किसी शहीद की बेहोश पत्नी की नाक पर माइक ला कर पूछ रहा है- ''मरते समय क्या उनका फोन आया... !'' एक पाकिस्तानी एंकर को बुलाकर उसकी ऐसी तैसी की जा रही है। कह रहे है बालकों की तरह पाकिस्तान दुम दबा कर भागा...। मिग विमान जो इतने दुर्घटना ग्रस्त होते हैं उसकी जांच की बात किसी ने न कही।

आज युद्ध, गरीबी और शोषण का स्रोत है। आधे पाकिस्तान की जमीन, दौलत जनरलों की है इसीलिए युद्ध की स्थिति बनाये रखना उनके लिए जरूरी है। वहां की हारी मारी जनता भी युद्ध नहीं, अमन सकून चाहती है।

यह सब देख मुझे एक नाटक 'गड्ढा' याद आ रहा है। नाटक में गड्ढे के पास से गुजरने वाले लोग उसमें पड़े व्यक्ति से तरह-तरह के सवाल पूछते हैं, पर उसे निकालने की चिंता किसी को नहीं है. मीडिया पूछ रहा है- मरते समय आप कैसा फील कर रहे हैं?...!

इस अज्रस्व प्रवाह, भक्ति पर आपकी टिप्पणी?

इंसान होने की क़ीमत

किस्सागोई प्राचीन काल से एक कमाल की कला है। किस्सागो घंटों तक दर्शकों को बांध के रखता है। आज यह विधा बहुत जोरों पर है। उत्तराखंड के नवीन पांगती किस्सागोई की विधा में गजब के माहिर हैं। मेरी बेटी कात्या में भी किस्सागोई के जर्म हैं। वह किसी भी किस्से को पूरे अभिनय से, उसके किरदार को इस तरह जीती है कि उसकी आंखें, उसकी बॉडी लैंग्वेज उस किस्से को आत्मसात कर, सुनने वाले को सम्मोहित कर थियेटर का मजा देती है। थ्री ह्वीलर वालों के साथ मेरे और उसके बीच कुछ किस्से ऐसे उपजे कि वे भी किस्सागोई के अंग हो गये।

एक बार मैं 19-20 साल के एक नौजवान ऑटो वाले के साथ बैठा। वह खूब बातूनी था। उस समय हल्द्वानी में सेना की भर्ती चल रही थी। वह बोला, ''गुरुजी! मैं ग्रेजुएट हूं। आगे की बेकारी को देखकर मैंने यह थ्री ह्वीलर का काम पकड़ लिया। अब भर्ती हो रही है तो मैं भी आजमाऊंगा किस्मत।'' एक सवारी ने टिप्पणी की, ''बढ़िया है देशभक्ति जरूरी है।'' तो उसने पलटकर कहा, ''अरे किसी की देशभक्ति! पेटभक्ति है। वह कुछ ही लोग होते हैं जो जुनून में देशभक्ति के नाम कुरबान होते हैं। अभी यहां एक गिरी फौजी शहीद हुए। वह तो घुस-घुस के मारने वाला थे। वह मौत से बच सकता था, पर नहीं! बंदे में बस मरने का जुनून था। बिना शहीद हुए नहीं माना। कुछ ही होते हैं जो असल शहीदी जज्बे वाले होते हैं। मेरी तो यह लड़ाई यह फौज का खेल समझ में नहीं आता। यह सत्ताधारियों का खेल है। जो भी मरता है आम आदमी मरता है...।'' तभी गैस गोदाम चैराहा आ गया। मुझे आगे पैदल जाना था। वह बोला, ''गुरूजी ! कहां जाना है। मैंने कहा आगे विवेक विहार।'' वह बोला- ''अरे तो मैं छोड़ देता हूं।'' मैंने कहा- ''नहीं नही।'' वह बोला- ''अरे पैसे मत देना। गुरुओं की सेवा का मौका कब मिलता है!'' वह मुझे मेरी मंजिल पर छोड़ आया। पैसे नहीं लिये।

बेटी एक मुसलिम ऑटोवाले के ऑटो में बैठी तो वो मजहब पर बात करने लगा। बोला, ''शिया सुन्नी हमारे वहां हैं। एक कहते हैं कि अल्लाह के पास डायरेक्ट कनेक्शन है, बीच वाला कोई नहीं। एक कहते हैं कि बीच में एक

मीडियेटर है जो अल्लाह से मिलवाता है। जैसे आपके देवता मीडियेटर होते हैं। पर मैं तो ये जानता हूं कि भगवान या खुदा अगर कहीं हैं तो वह प्रेम है।'' फिर उसने पूछा, ''क्या आपकी शादी हो गयी?'' बेटी ने कहा- ''हां।'' इस पर वह बोला, ''मेरी शादी को 28 साल हो गये हैं, एक दिन भी लड़ाई नहीं हुई। मुझे कितनी भी देर हो जाये वह मेरे बिना खाना नहीं खाती। कितनी बार कहा- अरे खा लिया कर पर वह कहती है- तुम्हारे बिना खाना मिट्टी है। कभी फुर्सत में होता हूं तो मैं ही खाना बनाता हूं, बर्तन झाड़ू सब करता हूं। बहुत मजा आता है। प्रेम में डूब जाता हूं। प्रेम भगवान, गुरु वही है जो ऊपर से नीचे प्रेम में डूबा हो...।'' बेटी ने कहा, ''ये कैसे! आपस में कभी मतभेद तो होते हैं!'' वह बोला, ''नहीं ताकत हो तो प्रेम एक ऐसी दवा या दुआ है सब कुछ गलत डीलिट कर देता है, बस रह जाता है लाइक।''

जीवन संघर्ष में सीधे पगे लोगों में गहरी विट व जीवन के प्रति व्यंग्य होता है। दिल्ली में बहुत सी जगहें ऐसी हैं, जहां यातायात घोर अव्यवस्था में चलता है पर वहां एक्सीडेंट रेट दुर्लभ हैं। यातायात पैदल यात्री को विशेष सम्मान देते, उन्हें बचाते हुए चलता है। बेटी एक दिन चांदनी चौक में परहोश घूमते हुए एक जगह खड़ी हो गयी। पीछे से एक रिक्शे वाला न जाने कितनी देर से घंटी बजा रहा था। अचानक उसने सुना और मुड़ी तो देखा रिक्शे वाले ने एक खास अंदाज में कहा, ''जिंदगी है चलते रहिये।'' और वह निर्लिप्त अंदाज में निकल गया।

एक बार एक थ्री ह्वीलर में एक नये चालक बने नौजवान से मैंने उसे पैसे अपने पूछे तो वह बोला, ''जितने में खुशी हो उतना दे देना। खुशी में ही बरकत है।'' वह गाते हुए ऐसे ऑटो चला रहा था जैसे जिंदगी एक सफर है सुहाना... गा रहा हो। वह अपनी गर्दन कभी दायें कभी बायें झटक रहा था जबकि उसके चेहरे में कोई ऐसी बालों की लट नहीं थी कि उसे झटकना पड़ता। गंतव्य आया तो मैंने फिर पूछा कितने हुए? तो उसने कहा कि बताया न जितनी खुशी हो उतनी दे दो। मैंने सत्तर रुपये दिये तो उसने दस रुपये लौटा दिये। मैंने कहा, ''नहीं इतने ही बनते हैं।'' तो उसने सामने खड़ी एक बच्ची से दस रुपये में पैन ली। फिर उसने मुझे एक पैन देते हुए कहा, ''मेहनत करने वालों को इज्जत देना बहुत बड़ी दुआ है। दुवाओं में बरकत होती है।'' और फिर गाते हुए वही बाल झटकने के खास अंदाज से वह गाते चल दिया... अच्छा चलता हूं... दुआओं में याद रखना।

एक ऑटो वाले ने बतलाया कि एक बजुर्ग सज्जन को रोज इधर-उधर ले जाता था। एक दिन वह अपना झोला ऑटो में भूल गये। मैं घर जानता था तो सज्जन की बहू को झोला दे दिया। उन्होंने खोला तो लाखों के सोने के गहने भरे थे। दूसरे दिन वह सज्जन मुझसे बोले, ''अरे यार, तूने रायता फैला दिया। बहू से बचा के मैंने उसे बैंक में रखा था। तुमने इस बुढ़ापे में मेरा बैंड बजा दिया।''

एक बार थ्री व्हीलर में बेटी जा रही थी। तभी एक पैदल यात्री हल्के से उसके ऑटो से टकराया फिर एक कार से। बेटी घबरा गयी, ''कहीं ब्लाइंड तो नहीं?'' थ्री व्हीलर वाले से कहा, ''अरे नहीं आंख वाला है। बहुत से आंख वाले अंदर से अंधे होते हैं। ब्लांइड वालों की अंदर की आंखें ऐसी खुली रहती हैं कि वह आपको रोड क्रॉस करा दें। और फिर अब तो लड़कियों की लाइन ब्लाइंड को रोड पार करवाने के लिए लगी होती है। मैडम! मेरे मकान के आगे एक सरकारी हॉस्पिटल है। जब मैं बोर होता हूं तो अपने छज्जे में खड़ा हो जाता हूं और अस्पताल में आते-जाते लोगों को देखता हूं। किसी का सिर फूटा, किसी की टांग, किसी के बॉडी में चाकू के घाव। कभी-कभी उनका हाल चाल पूछने भी चला जाता हूँ तो पता चलता है कि जमीन जायदाद, औरत और बेबात की बातों के चक्कर में ये सीन बने हैं। यह सब आंख वाले अंधे ही तो हैं पर यह सब देख कर अपना तो मन लग जाता है।''

इस दुनिया का इतिहास और इसका नक्शा ऐसे ही तानाशाह जहनी तौर पर बीमार लोगों के कर्म से बना है, जिन्होंने लूट, कत्लेआम के लिए कत्लेखास किया। इनका परपीड़क मन ऐसे ही दृश्य देख बहल जाता होगा। यह सब किस्से सुन कर मेरे दिमाग में आया कि कितने रंग हैं इस दुनिया के! बस-

कि दुश्वार है हर काम का आसाँ होना,
आदमी को भी मयस्सर नहीं इंसां होना

कहीं रंग ही रंग, कहीं बदरंग। हम जो अपने को रंगसाज होने के दावा करते हैं, अगर इस बदरंग में रंग भर सके तो कुछ हमारा होना इस दुनिया में बनता है क्योंकि-

अगर है अपने होने का हक तो पैदा करना ही चाहिए।

ईमानदारी की शहादत

हाल ही में जब एक जवान शहीद हुआ उसके पिता ने यह नहीं कहा, ''मुझे अपने बेटे की शहदात पर गर्व है। आगे भी मैं अपने बच्चों को फौज में भेजूंगा...।'' उसने कहा, ''वह रोटी के लिए वह मरा।''

एक बार मेरे पिता ने बार्डर में तैनात एक सिपाही से कहा, ''आप की देशभक्ति पर हमें गर्व है।'' उसने संगीन किनारे रखी और बैल्ट ढीलीकर अपना पेट दिखा कर बोला, ''देशभक्ति नहीं, यह पेट भक्ति है।'' इस पर एक गहरे सोच वाले कर्नल साहब से यह बात हुई तो उन्होंने कहा, ''हर पेशे की एक डिमांड होती है। हमारे पेशे की डिमांड है मरना और मारना। और नेशनलिज्म के बेस पर ही फौज बनती है। वह नेच्युरल है। साइकोलॉजिस्ट अंग्रेजों ने हर रेजीमेंट का नारा भी धार्मिक बनाया। गोरखाली आयो रे..., जै महाकाली..., जै बद्री विशाल..., बोले सो निहाल ब्ला ब्ला ब्ला....। और फिर यह आदमी पर डिपेंड करता है। आपके ही पेशे में कुछ होंगे जो डूब कर पढ़ाते होंगे, कुछ कोर्स तक सीमित होंगे, कुछ टालमटोल करते होंगे। फौज में भी ऐसी किस्में हैं। आज पैसा खास है तो फौज में पोस्ट खाली हैं। फिर हर देश का नागरिक नेशनलिस्ट तो होता ही है। आज का पॉलिटिकल नेशनलिज्म सिक नेशनलिज्म है।''

मैंने उन्हें कहा कि युद्ध राजनीतिज्ञों का खेल है। रसेल कहते हैं कि आदमी की विध्वांसत्मक प्रवृत्ति युद्ध करती है। रचनात्मक प्रवृत्ति जिंदगी को खास बनाती है। कला में सारी दुनिया एक है। पाकिस्तान में एक ग्रुप फरीद भगवान कृष्ण की कब्बालियां गाता है। पं. जसराज ओम नमो भगवताय गाते हैं तो अल्ला मेहरबान भी गाते हैं। आप अगर ओसमान मीर की शिव वंदना या भक्ति गीत को पूरी तन्मयता से गाता देखेंगे तो दंग रह जायेंगे। राजनीति आदमी को बाँटती और बरबाद करती है।

कभी पाकिस्तानी, कोरियाई, तुर्की या ईरानी सीरियल टीवी में आते थे। हम उनके इंतजार में रहते थे। उनके सवाल सारी दुनिया के सामाजिक सवाल थे। क्या कंटेंट! क्या एक्टिंग और क्या डायरेक्शन होता था। हमारे देश के सीरियल सीरिलय किलर लगते हैं। सास बहू का षड़यंत्र आंख नाचाई...। बहसें भी होती हैं

तो हिंदू-मुसलमान या फिर किसी पाकिस्तानी को ले आते हैं। पता नहीं गाली देने, खाने वो क्यों आते हैं! सब स्पॉन्सर्ड लगता है।

मेरी बात वह बोले, ''आई टोटली एग्री विद यू। शहीदों के लिए कुछ करना है तो राजस्थान के एक बंदे जीतेंद्र सिंह सा करें। वह शहीदों के परिवार के लोगों को चिट्ठी लिखते हैं। यह असल काम है। कल मैं मर जाऊंगा तो एक बार नारा लगेगा- जब तक सूरज चांद रहेगा तब तक तेरा नाम रहेगा फिर सब भूल जायेंगे। जिंदगी की भाग दौड़ में यह भूलना मजबूरी भी है। मेरे लिए तो मरना मारना पेशा है, मेरी डयूटी है...।'' फिर हंस के कहते हैं- ''वैसे भी अपनी डयूटी में समर्पित, ईमानदार बंदा, अंत में शहीद ही होता है।''

पहचान का संकट

बीमारी में इतनी दुवाऐं फेसबुक से मिलीं कि दुवाऐं भी हैरत में पड़कर परेशान हो गयीं कि ये बंदा है कौन! पर अब ठीक हो रहा हूं तो मिलने वाले कुछ ले के आना छोड़, खाली हाथ भी नहीं आते। अध्यापक दिवस में एक आस थी कि हजारों छात्रों और मित्रों के फोन ही आयेंगे पर दो को छोड़ किसी का फोन भी नहीं आया। बस! तीन जिंदगी के असल गुरु जरूर आये। अन्य को शायद मुगालता होगा-

वो क्या हुआ बीमार
मिली दुवाऐं बेशुमार
अब फिक्र उसे कहां
इक सटीक तो उसे लगेगी

हां! आरएसएस बैकग्राउड वाले हमारे प्रेमी आ गये। उन्होंने बधाई दी तो मैंने कहा, ''अरे मैं इसे नहीं मानता मैं तो तो गुरु पर्व मनाता हूं। अंग्रेजी न्यू इयर के बदले हिंदू नववर्ष मनाता हूं...।'' पर मेरे पुराने कर्मों ने फिर से भांची मार दी। मेरी लाइब्रेरी टटोल रहे थे कि दुर्भाग्य से लेनिन की किताब 'व्हट इट इज टु बी डन' निकल आयी। वह मजाक में बोले- ''गुरूजी वो तो हम हैं जो आप शहरी नक्सली घोषित नहीं हुए!'' मैंने घिघिया के कहा– ''अरे पॉलीटिकल सांइस पढ़ाता था तो ये कोर्स में थी...। लाइब्रेरी मे इस साल का पंचाग भी तो है...!'' उन्होंने इनडायरेक्ट ही सही मगर इशारा किया कि आज संघ कार्यकर्ता होता तो वीसी बन जाता कहीं ....। वीसी छोड़ प्राचार्य तक नहीं बन सका। आजकल मैं वैसे भी अपनी शाखा बैकग्राउड को टटोल रहा हूं कि मैंने भी शाखा ज्वाइन की थी, गुरु पर्व मनाया तो कामरेडों ने थूथू की।

पर हम तो हमेशा मारे गये अपने निखालिस आदमी होने से। हमेशा ऐसे ही मुफ्त बदनाम हुए। मेरा कांग्रेसियों ने कम्युनिस्ट कहकर एडमिनिस्ट्रेटिव ट्रांसफर करवाया। पर कामरेडों ने एक शब्द भी नहीं कहा। वह कभी काम न आये। क्या पता वह मेरे मरने का इंतजार करते रहे कि ये मरे तो हम भी एक लाल सलाम दाग दें।

भाजपाइयों ने सीधे इलजाम लगाया कि जब से ये आये हैं कालेज बिगाड़ दिया, प्रेमचंद जयंती मनाते हैं, बहस कराते हैं कि कालेज यूनियन होनी चाहिए या नहीं। आज सब कांग्रेस का करा धरा ही साइड इफैक्ट के रूप में सामने आ रहा है। एपीजमेंट पॉलीसी, परिवारवाद वगैरह वगैरह...।

पर आज भाजपा सरकार की मेघा से चकित हूं। नये यातायात कानून से ही तीन दिन में ही इतना कमा लिया कि रूस को कर्ज दे रही है। क्या करें टाइम पर अकल नहीं आयी। अब तो डर लगता है अपनी पुरानी बूढ़ी ग्यारह नम्बर की गाड़ी का ही चालान न हो जाय।

स्वाद

अथाह दर्द ने मुझे बताया कि मेरी औकात क्या है! हम तो फुसफस निकले। दोस्त तो 'गेट विल सून' का जुमले के साथ रस्म अदायगी कर किनारे हो लिए, पर कविता ने, परिवार ने सीने से लगाये रक्खा। अपनी झनझनाहट करती उंगलियों से किसी तरह कविता लिख रहा हूं उनके स्वाद मेंः

फ़िक्र का स्वाद
तुम्हारे हाथ का लज़ीज़ स्वाद
अब भी कायम है
चटखारे वाला- मीठा, खट्टा, चटपटा
उंगलियां चाटने वाला
कभी नहीं रहा बेस्वाद
उन हाथों की तासीर का जलवा
दिमाग से ताप लेते दिल तक आ जाता था
और एक छोंका छ्यां... करता
खिला देता था शरीर के सारे कोश
रसों के रोम-रोम में डूब कर...
और आज बीमारी के बाद
जब शरीर के स्वादकोश
उदास लटके पड़े हैं पथ्य लेते
तब भी पथ्य मे भी होता है स्वाद का घोल
धीरे-धीरे घुलता हुआ
सारे कोशों को अपने धीमे प्रवाह से
आपस में वार्ता वह करते हैं
'उठो भाई! फेरी आयी है, स्वाद ले लो भाई...!'
स्वाद आज बे-छोंके पथ्य में भी है
भरा पूरा मेरे लिए
तुम्हारी फ़िक्र का स्वाद!